प्रभात खबर

वेलकम टू हंगर रिपब्लिक ऑफ झारखंड

अरविंद

वर्ल्ड फूड प्रोगाम और एमएस स्वामीनाथन रिसर्च फाउंडेशन द्वारा मार्च 2009 में तैयार रिपोर्ट में बताया गया है कि झारखंड ने ओड़िशा को पछाड़ कर पहला स्थान प्राप्त कर लिया है. इंटरनेशनल फूड एंड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट के स्टेट हंगर इंडेक्स (2008) के अनुसार झारखंड भूख व खाद्यान्न संकट के मामले में दूसरा सबसे चिंताजनक राज्य है. वर्ल्ड फूड प्रोगाम तथा इंस्टीट्यूट ऑफ ह्यूमन डेवलपमेंट के द्वारा 2008 में 'फूड सिक्यूरिटी एटलस ऑफ रूरल झारखंड' तैयार करनेवाले अर्थशास्त्री डॉ हरीश्वर दयाल बताते हैं कि 'खाद्यान्न की उपलब्धता, इस तक लोगों की पहुंच तथा उपभोग के मानकों पर पलामू, गढ़वा, चतरा, गोड्डा व साहेबगंज सबसे असुरक्षित जिले हैं.' स्थिति यह है कि राज्य के 24 में से 17 जिले खाद्यान्न उपलब्धता के मामले में असुरक्षित हैं.

गैरसरकारी संगठन ग्राम स्वराज अभियान ने बीते साल के मध्यांत में पलामू के विविध परिवारों में भूख से बिलखते परिवारों का नमूना सर्वेक्षण लिया. इसमें पलामू जिले के छतरपुर, सतबरवा व विश्रामपुर प्रखंडों के अधिसंख्य परिवारों में भूख व कुपोषण की स्थिति पायी गयी. बीते साल बीस जुलाई से लेकर 12 अगस्त के बीच इस सर्वे में 14 लोगों की भूख से मौत दर्ज की गयी है. इसमें छतरपुर के छह लोग आशादेवी, सीताराम भुइयां, पनवा कुंवर, प्रभा देवी, अलियार कुंवर, यमुना सिंह; पाटन के तीन लोग राजकुमारी कुंवर, सुबा देवी, वसुदेव भुइयां, हुसैनाबाद के जगमोहन पासवान, भवनाथपुर, गढ़वा से गया भुइयां, कौशल्या कुंवर, मेराल से ठाकुरी कुंवर, तरहसी, पलामू के सुबेदार मोची के नाम उल्लेखनीय हैं.

'पीयूसीएल बनाम भारत सरकार वाद-2001' यानी भोजन के अधिकार मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त कमिश्नर के **प्रधान सलाहकार विराज पटनायक** बताते हैं कि 'झारखंड में गवर्नेंस की बड़ी समस्या है. सूखा क्षेत्रों के लिए सुप्रीम कोर्ट का सख्त आदेश है कि मध्याह्न भोजन सहित अन्य सामाजिक योजनाएं हर हाल में चलनी चाहिए. मगर पिछले साल झारखंड यात्रा के दौरान मैंने पाया कि सुंदरपहाड़ी इलाके में छह महीने से कोई राशन नही बंटा. झारखंड तो खाद्य सुरक्षा के मानकों को पूरा करने में सबसे खराब राज्य है.'

राज्य में भूख से होनेवाली मौतों के संदर्भ में जनहित याचिका 2008 में दायर हुई. 'फैसल अनुराग (राइट टू फूड ग्रुप) बनाम झारखंड राज्य' मामले में समय-समय पर हाइकोर्ट ने आदेश जारी किये हैं. इस याचिका में अक्तूबर 2008 में चतरा के प्रतापपुर प्रखंड के हिंडियाकलां गांव में भुखमरी से 8 मौतों की, 2004 में पलामू के कई गांवों में भूख से 9 मौतों और गोड्डा में दो मौतों की तथा 2002-2003 में लेस्लीगंज, मनातू, भंडरिया आदि में हुई दर्जनों मौतों का जिक्र है. दरअसल पलामू, गढ़वा, लातेहार, चतरा, साहेबगंज, गोड्डा, देवघर, जामताड़ा आदि 'भूखों के गणराज्य' सरीखे हैं. पलामू में चैनपुर, मनातू, छत्तरपुर, पाटन, सतबरवा, पांकी, हुसैनाबाद से लेकर गढ़वा के मेराल, रंका, भंडरिया और लातेहार के महुआडांड आदि इसके पर्याय हैं. सालों भर ऐसे इलाकों से कुपोषण जनित भूख से मौत की खबरें आती रहती हैं. आज दुनिया में दीर्घकालिक भूख की समस्या से जूझ रहे 42 प्रतिशत लोग चीन व भारत में निवास करते हैं.

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस) का 55वां राउंड बताता है कि झारखंड के करीब 10.4 फीसदी परिवार मौसमी खाद्य असुरक्षा और ढाई फीसदी दीर्घकालिक भूख की समस्या से पीड़ित हैं. इनमें छह फीसदी को तो आधे साल तक यूं ही गुजारना पड़ता है. करीब 64 फीसदी को दो से तीन महीने और 28 फीसदी को चार-पांच महीनों तक खाद्यान्न नसीब नहीं होता. एनएसएस के 61वें राउंड (2004-05) के अनुसार झारखंड के गरीब परिवारों में केवल 79 प्रतिशत लोगों के पास राशन कार्ड हैं, वही केवल 1.1 फीसदी लोगों के पास फूड फॉर वर्क कार्ड है. जबकि आइसीडीएस की लाभुक दर 0.7 प्रतिशत, अन्नपूर्णा कार्यक्रम में 0 फीसदी और मिडडे मिल तक केवल 14.6 प्रतिशत लाभुक पहुंच पाये.

पलामू डीसी डॉ अमिताभ कौशल कहते हैं कि 'सूखे से निबटने के लिए हमारा प्राइमरी फोकस फूडग्रेन सिक्यूरिटी है. प्रशासन का झुकाव सोशल स्कीम जैसे आइसीडीएस, मिडडे मिल, पीडीएस, पेंशन योजना आदि पर ज्यादा है. मगर जनवितरण प्रणाली (पीडीएस) से केवल 25 फीसदी भाग ही पूरा किया जा सकता है, बाकी तो कृषकों की उपज आदि पर निर्भर करता है.' यहां बताते चलें कि पीडीएस पर बनी सेंट्रल विजिलेंस कमिटी के अध्यक्ष जस्टिस (रिटायर्ड) **डीपी बाधवा** ने हालिया रिपोर्ट में जिक्र किया है कि पीडीएस में अनियमितता, भ्रष्टाचार व असंवेदनशील रुख के कारण झारखंड की स्थिति सबसे भयावह है. राज्य सरकार का दावा है कि एक रुपये की किफायती दर पर 35 किलो गेहूं या चावल का वितरण हो रहा है. लेकिन किफायती दर से अधिक पैसे लिये जाने और कम अनाज देने के सैकड़ों मामले सामने आते रहे हैं.

भोजन के अधिकार के लिए लड़ रहे **सामाजिक कार्यकर्ता बलराम** (जो सुप्रीम कोर्ट के कमिश्नर के लिए झारखंड में स्टेट एडवाइजर हैं) बताते हैं कि 'राज्य में पीडीएस के तहत 12 लाख टन की जरूरत है, अलॉटमेंट एक चौथाई है. लिफ्टिंग तो इसका भी आधा होता है. फिर डिस्ट्रीब्यूशन में 60 प्रतिशत लीकेज होता है. यह सब गवर्नमेंट का आंकड़ा है. 42 फीसदी गलत लोगों को बीपीएल, एपीएल का कार्ड मिला है. इस तरह जरूरतमंदों में इसकी सात-आठ से ज्यादा लोगों तक पहुंच नहीं है. लोग भूखों मर रहे हैं. चतरा, पलामू के लोगों में औसतन 1200 सौ से कम कैलोरी की उपलब्धता है. भारत का पलामू क्षेत्र इथोपिया जैसे देशों के समकक्ष है.'

केडी सिंह बताते हैं कि 'बीती सदियों में पलाश, लाह, महुआ मिल कर पलामू को अर्थवत्ता प्रदान करते थे. लाह की फैक्टरियां, सरई के कारखानों, हर्रे, बहेरा आदि वनौषध से ग्रामीण अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर थीं. अब तो भुखमरी के महासंकट का दौर कहीं-कहीं जून से अगस्त, तो कहीं सितंबर से दिसंबर तक चलता है. दरअसल पलामू में अगर लोग जिंदा है, तो यह पलायन करनेवाले लोगों के कारण ही. वे यहां की अर्थव्यवस्था को संतुलित कर रहे हैं. खेती के सीजन में उत्तर बिहार, गया, भोजपुर, औरंगाबाद, पुराना साहाबाद तथा भभुआ आदि जाते हैं और जाड़े के दिनों में सैकड़ों ट्रकों के जरिये धान, गेहूं कमा कर लाते हैं.'

सुप्रीम कोर्ट के कमिश्नरों द्वारा तैयार नौवीं रिपोर्ट (2009) में दर्ज 2007-08 के आंकड़े झारखंड की दुर्दशा बयां करते हैं. जैसे मिडडे मिल में झारखंड के 67 प्रतिशत बच्चों का ही कवरेज है, जबकि इसमें आवंटित बजट का खर्च केवल 32.2 और अनाज का उठाव 64.8 फीसदी है. समेकित बाल विकास योजना (आइसीडीएस) के बैनर तले सप्लीमेंटरी न्यूट्रीशन प्रोगाम के तहत झारखंड के छह साल से कम उम्र के केवल 52.3 प्रतिशत बच्चे को लाभ मिलता है. भुखमरी के मामले में सबसे संवेदनशील उम्र समूह में बूढ़े आते हैं. नेशनल ओल्ड एज पेंशन स्कीम के तहत झारखंड का कवरेज परसेंटेज 61.9 है. नेशनल फैमिली बेनिफिट स्कीम के तहत परिवार के किसी मुखिया की मृत्यु के बाद संतप्त परिवार को दस हजार रुपये देने का प्रावधान है. मगर इसमें झारखंड का कवरेज 15.3 ही है. यह भी कि लक्षित जनवितरण प्रणाली (टीपीडीएस) के तहत बीपीएल लोगों के लिए अनाज का उठाव भी कम है.

उधर प्रख्यात अर्थशास्त्री **रमेश शरण** सामाजिक समस्याओं की ओर संकेत करते हैं कि 'पलामू में सूखा राजनीतिक-आर्थिक है. यह समस्या स्ट्रक्चरल (संरचनागत) ज्यादा है, जहां जल-जमीन आदि पर कुछेक लोगों के एकाधिकार से स्थिति गहराती जाती है. सूखा है तो सबके लिए होना चाहिए, मगर इससे प्रताड़ित लोग समाज के सबसे गरीब तबके ही क्यों होते हैं. भूख से मरनेवाले वृद्ध, महिलाएं आदि तथा दलित व आदिवासी ही क्यों होते हैं. इस डिफरेंशियल इंपैक्ट (असमान प्रभाव) को देखना चाहिए.'

इतिहासकार पुरुषोत्तम कुमार के अनुसार 'बीते दो हजार सालों से अर्द्धकृषक व अर्द्धआखेटक रहे आदिवासियों ने अकाल का सामना नहीं किया. मगर 1772 में झारखंड के इलाकों में अंगरेजों के आगमन और स्थायी बंदोबस्ती से अकाल, दुर्भिक्ष और कंगाली का इतिहास शुरू होता है. आर्थिक तंत्र की लूट की संस्कृति से आदिवासी समाजवाद ध्वस्त हो गया.' अंगरेजी राज की बात और थी, अब तो आजाद भारत में वनअधिकार में कटौती, वनोपज बटोरने को अपराध मानने के शासकीय रुख तथा संवेदनहीनता के कारण अब आदिवासी भुखों मरते हैं. ग्रामीण बताते हैं कि अनाज के अभाव में करीबल, बांस, खुखड़ी, रुगड़ा, दिरहुल साग, अमरी साग, कटईसाग, डुमरी साग, जामुन, कुसुम,पियार, क्योंग, अंवला, केंदू, गेंठी कांदा, आरु कांदा ही भोजन के मुख्य भाग बनते गये हैं. लंबे समय तक घर में अनाज की कमी और वनोपज जैसे-तैसे से खाने से कई बार गंभीर बीमारियां भी होती है, जो कई बार मौत का कारण बनती हैं. 1952 में लिखी **नागार्जुन** की कविता 'अकाल और उसके बाद' का अंश यहां बेहद मौजूं लगता है : 'कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास..../दाने आये घर के अंदर कई दिनों के बाद /धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद / चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद.'

(जारी)

(सीएसडीएस के इनक्लूसिव मीडिया फेलोशिप के तहत लिखा गया आलेख.)

PRABHAT KHABAR, 21 JUNE, 2010, RANCHI